Approved by UGC
Journal No. : 63580
Regd. No. 21747

Indexed : IIJIF, I2OR & SJIF
IIJ Impact Factor : 2.471
ISSN 2277-2014

Research Discourse

An International refereed research Journal

Vol. VII | No. XXIV | July-September 2017

RESEARCH DISCOURSE
VARANASI

Editor in Chief
Dr. Anish Kumar Verma

Associate Editors
Dr. Rakesh Kumar Maurya
Dr. Santosh Kumar Tripathi
Dr. Purusottam Lal Vijay

International Innovative Journal Impact Factor (IIJIF)
I2OR
Scientific Journal Impact Factor

- प्राचीन भारतीय इतिहास का पुनर्निर्माण में इतिहास लेखन का बदलता दृष्टिकोण — 122–125
  डॉ0 कन्हैया लाल यादव
- गढ़वाली लोकगीतों में मांगल गीत (विवाह संस्कार के सन्दर्भ में) — 126–129
  डॉ० शोभा रावत
- कबीर की रचनाधर्मिता का अन्यतम साक्ष्य : प्रतीक विधान — 130–135
  डॉ0 कृपा किन्ज्लकम्
- लोक साहित्य और 'मधुमालती' — 136–139
  सुकृति मिश्रा
- मुक्तिबोध की कविताओं में जनसंघर्ष — 140–142
  प्रगति मिश्रा
- प्राचीन ब्राह्मण एवं बौद्ध साहित्य में विवेचित आमात्य के अधिकार एवं कार्य — 143–146
  डॉ0 जयन्त कुमार
- कबीर की प्रासंगिकता — 147–151
  डॉ0 मुदिता तिवारी
- गाँधी दर्शन में साध्य और साधन — 152–155
  आनन्द शंकर तिवारी
- प्रत्यभिज्ञादर्शन में परमतत्त्व : एक अनुशीलन — 156–159
  प्रदीप नारायण शुक्ल
- न्याय–वैशेषिक दर्शन में ईश्वर का स्वरूप — 160–163
  अमित सिंह
- अद्वैत वेदान्त में परमसत्ता : एक अनुशीलन — 164–166
  रेखा त्रिपाठी
- अस्तित्व के लिए जमीन की तलाश करती स्त्री की संघर्षगाथा : 'एक जमीन अपनी' — 167–169
  प्रेमलता
- निःशक्त बालकों की शिक्षा व्यवस्था — 170–173
  सूर्य प्रकाश गोंड
- प्राचीन भारतीय अर्थनीति में मानवीय तत्व — 174–177
  डॉ0 विनीत कुमार गुरु
- भारतीय समाज एवं साहित्य में बहुजन स्त्री विमर्श — 178–179
  शकुन्तला देवी 'दीपांजली'
- औपनिवेशिक भारतीय रेलवे के विकास के संदर्भ में ऐतिहासिक लेखनों का पुर्न अवलोकन — 180–184
  शशिकेश कुमार गोंड
- राजा राममोहन राय का सामाजिक चिन्तन — 185–188
  हरि प्रताप सिंह
- बाल श्रमिक और उनकी समस्या : सामाजिक विकास के सन्दर्भ में — 189–191
  लक्ष्मी

Research Discourse - ISSN 2277-2014
An International Refereed Research Journal
Published by : South Asia Research & Development Institute
Varanasi, U.P. (INDIA)

Indexed by : IIJIF, I2OR, SJIF
IIJ Impact Factor : 2.471
Year-VII, No. XXIV, July-September, 2017
Page No. : 180-184

औपनिवेशिक भारतीय रेलवे के विकास के संदर्भ में ऐतिहासिक लेखनों का पुर्न अवलोकन

शशिकेश कुमार गोंड*

16 अप्रैल 1813 ई0 में मुंबई से ठाणे के बीच 34 किमी तय करने वाली भारतीय रेल आज एशिया का सबसे बड़ा रेल नेटवर्क है। भारत सरकार के रेल मंत्रालय के अधीन भारतीय रेल विश्व में सबसे ज्यादा रोजगार देने वाली संस्था है। इसके साथ ही भारतीय रेल किसी सरकार के अधीन विश्व का दूसरा सबसे बड़ा रेल नेटवर्क है जिसके अन्तर्गत 17 लाख से अधिक कर्मचारी कार्य करते है। यह संस्था 150 वर्ष से भी अधिक पुरानी है जिसके लिए भारत सरकार 1925 से ही पृथक बजट एवं आय व्यय का लेखा–जोखा रखती आ रही है जिसे अभी हाल ही में पुनः आम बजट का हिस्सा बना दिया गया है। भारतीय रेल भारतीय यातायात की मुख्य संघटक इकाई है। इसलिए इसे भारतीय यातायात की जीवन रेखा कहा जाता है। भारतीय अर्थव्यवस्था में रेल अन्तर्देशीय परिवहन का मुख्य माध्यम है। भारतीय रेल नेटवर्क एक विशाल नेटवर्क है जिसके मार्ग की कुल लम्बाई सन् 2005 तक 46640 मील है जिसमें 7133 स्टेशन, 7910 इंजन, 42441 सवारीयान, 5822 अन्य कोच यान एवं 222379 वैगन है।

भारतीय रेल एक बहुल गेज प्रणाली है जिसमें ब्रांड गेज (1.676 मिमी) मीटर गेज (1.000 मिमी), नैरो गेज (0.762 मी–610 मिमी) शामिल है। 1955 ई0 में भारतीय रेल के राष्ट्रीयकरण किये जा चुकने के पश्चात् अब तक कुल 40 प्रतिशत पटरियों का विद्युतीकरण किया जा चुका है। वर्तमान में प्रशासनिक सुविधा अनुकूल भारतीय रेल को 17 अलग–अलग क्षेत्रों में बाँटा जा चुका है।

इतिहासकारों के अनुसार ब्रिटिश भारत में रेलवे के विकास या उसको प्रारम्भ करने के पीछे अंग्रेजी नीति निर्माताओं की जो सोच थी वह वाणिज्यिक और व्यापारिक थी ताकि एक तो भारत में दूर–दराज के इलाकों तक अंग्रेजी उत्पादों की पहुँच सुनिश्चित की जा सके, वही दूसरे भारत में उपलब्ध प्राकृतिक संसाधनों (कोयला, लोहा, स्टील आदि) का भरपूर मात्रा में दोहन किया जा सके और एक बार रेल लाइनों के बिछ जाने के पश्चात् सुलभ, तेज एवं सस्ता यातायात तथा व्यापारिक मार्ग शासन के पास उपलब्ध हो जाता तथा यह भारत में प्रशासनिक दृष्टिकोण से भी काफी महत्व का था। जबकि कुछ विद्वानों के अनुसार भारत में रेलवे की शुरूआत इंग्लैण्ड में होने वाले औद्योगिक क्रान्ति का परिणाम था जिसने इंग्लैण्ड की पूँजी तथा अतिरिक्त बचतों को भारत की ओर आकर्षित किया जिसका माध्यम ब्रिटिश इस्ट इण्डिया कम्पनी बनी जिसने भारत में होने वाले निवेश पर उन निवेशकों को मुनाफे की गारन्टी दी। भारत में रेलवे के निर्माण कार्य का भार ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी ने निजी कम्पनियों को सौंपा जिसमें कुछ भारतीय उद्योपतियों ने भी पैसा लगाया, ये प्रमुख कम्पनियाँ थी– ब्रिटिश ईस्ट इण्डियन रेलवे, ग्रेट इण्डिया पेनिनसुला रेलवे, ईर्स्टन बंगाल रेलवे, सिंध पंजाब एण्ड दिल्ली रेलवे, अवध एण्ड रूहेलखण्ड रेलवे आदि। इस शोध पत्र का मुख्य उद्देश्य इस सम्बन्ध में लिखित विभिन्न लेखनो की समीक्षा करना है।

भारतीय रेल के 150 वर्षों का सफर–रतन राज भंडारी : भारत सरकार के सूचना और प्रसारण मंत्रालय और प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित यह पुस्तक मूल रूप से इंडियन रेलवे ग्लोरियस 150 हजार इयर का हिन्दी अनुवाद है। जो भारतीय रेल के 100 वर्षों के इतिहास पर विहंगम दृष्टि डालती है। यह पुस्तक कुल 25 अध्यायों में विभाजित है। जिसमें पहले पाँच अध्याय रेलवे के शुरूआती इतिहास पर प्रकाश डालते है मसलन भारत में पहली बार रेलवे लाने का विचार कैसे 1830 के दशक मे जोर पकड़ा और इसके सम्बन्ध में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी को भारत में रेलवे के विस्तार के लिए जार्ज मैक्डोनल्ड स्टीफेन्सन द्वारा पेटीशन दिया गया और बाद में कैसे 1849 में भारत में रेलवे के निर्माण के लिए दो कम्पनियों के साथ ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी के द्वारा करार करना

*असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, बसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी, उ0प्र0

Approved by UGC
Journal No. : 63580
Regd. No. 21747

Indexed by : IIJIF, I2OR, SJIF
IIJ Impact Factor : 2.471
ISSN 2277-2014

Research Discourse

An International refereed research Journal

Year-VIII **No.VIII** **Supplement 2018**

Editor in Chief
Anish Kumar Verma

Associate Editors
Rakesh Kumar Maurya
Purusottam Lal Vijay
Romee Maurya

Published by :
South Asia Research & Development Institute
B. 28/70, Manas Mandir, Durgakund, Varanasi-221005, U.P. (INDIA)
Website : www.researchdiscourse.org
E-mail : researchdiscourse2012@gmail.com
Mobile : 09453025847, 8840080928

पूजा रानी
लोकतंत्र, मानव अधिकार तथा न्यायपालिका 54–55
डॉ0 चरण सिंह मीना
दलित आत्मकथाओं की समीक्षा 56–57
डॉ0 प्रदीप कुमार मीना
धर्मशास्त्रों में विहित विवाह संस्कार : एक अध्ययन 58–59
डॉ0 उदय राज मीना
आध्यात्मिक राष्ट्र की आधुनिक मीरा 60–62
रामजी लाल मीना
परमहंस योगानंद के दर्शन में ईश्वरास्तित्व के लिए दिए गए तर्क 63–65
कुमुदेश कुमार सिंह एवं डॉ0 सुस्मिता भट्टाचार्य
जनजातीय जीवन पर आधुनिकता का प्रभाव : राजस्थान के विशेष संदर्भ में 66–68
डॉ0 चन्दन मल शर्मा
नीति परक रचनाकार बाबा दीन दयाल गिरि (दृष्टान्त–तरंगिणी) 69–72
डॉ0 शमा परवीन
षोडशसंस्कारविमर्शः 73–77
डॉ0 भूपेन्द्र नारायण झा
मैत्रेयी पुष्पा के उपन्यास इदन्नमम में राजनीतिक संघर्ष के विविध रूप 78–81
डॉ0 गोविन्द शरण शर्मा
काव्य और शिल्प 82–84
डॉ0 राजकिशोर श्रीवास्तव
शिक्षा, शिक्षक एवं मूल्य : एक अध्ययन 85–86
संगीता सिंह
पर्यावरण संरक्षण में भारतीय परम्पराओं का योगदान 87–90
डॉ0 अमरेश कुमार त्रिपाठी
यादव जाति की उत्पत्ति : एक अध्ययन 91–92
डॉ0 चन्द्रभान सिंह यादव
शिक्षित महिलाओं की व्यक्तिगत अभित्सायें एवं अन्तः क्रियात्मक स्वरुप : एक अध्ययन 93–94
नम्रता सिंह
'शाल्मली' : नारी मुक्ति का नया अंदाज 95–96
डॉ0 ज्योति. एन
महिला उद्यमिता : आर्थिक सशक्तीकरण की नई पहल 97–99
डॉ0 अनुपम मनुहार
औपनिवेशिक काल के दौरान भारत में रेल निर्माण से सबंधित पाश्चात्य और राष्ट्रवादी विमर्श 100–102
डॉ0 शशिकेश कुमार गोंड

Research Discourse (ISSN 2277-2014) : An International Refereed Research Journal, **Published by :** SARDI, Varanasi, U.P. (INDIA)
Indexed by : IIJIF, I2OR, SJIF, **IIJ Impact Factor :** 2.471, Year VIII, No. VIII, **Supplement 2018,** Page No. : 100- 102

औपनिवेशिक काल के दौरान भारत में रेल निर्माण से सबंधित पाश्चात्य और राष्ट्रवादी विमर्श

डॉ0 शशिकेश कुमार गोंड*

*सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी, उ0प्र0

सारांश : भारतीय रेल को वर्तमान समय में भारतीय यातायात व्यवस्था की जीवन रेखा कहा जाता है। जिसका आरंभ 1853 ई. में बॉम्बे से ठाणे के मध्य पहली बार रेल परिचालन के साथ हुआ। इसके निर्माण के साथ ही भारत और इंग्लैण्ड दोनों ही जगहों पर बहस का सिलसिला प्रारंभ हो गया। भारत में अंग्रेजी सरकार रेल निर्माण के खर्चों और सामाज्यिक सेवार्थ उसके कार्यो पर बहस कर रही थी। वही राष्ट्रवादी रेलवे को तत्काल समय में भारत की जरूरतों के विपरीत बता रहे थे। जिसका फिलहाल भारतीयों को ज्यादा लाभ नहीं था। राष्ट्रवादियों का तर्क था कि सरकार रेलवे पर खर्च करे के बजाय भारत और भारतीयों का भला सिंचाई के लिए नहरों के निर्माण द्वारा कर सकती है।

मुख्य शब्द : औपनिवेशिक काल, भारतीय अर्थव्यवस्था, राष्ट्रवादी विचारक, मातृदेश, औद्योगिकरण, भारतीय जनमानस, अर्थव्यवस्था आदि।

भारत के इतिहास में यातायात और संचार का आधुनिक युग भारतीय रेल प्रारम्भ होता है। रेलवे के भारत म निर्माण से पूर्व भारतीय संचार व्यवस्था मध्यकालीन यातायात के परम्परावादी साधनों पर निर्भर थी। भारत जैसे विविधतापूर्ण भौगोलिक क्षेत्र वाले विशाल भू–भाग पर यातायात के लिए स्थलीय मार्गो का प्रयोग किया गया। परन्तु यह संचार द्रुत गति से होने की बजाय धीमी गति का था। इसके पीछे का मुख्य कारण एक तो भारत में स्थलीय भागों की खराब स्थिति और साथ ही यातायात के प्रयोग मे लाए जाने वाले साधन जैसे बैलगाड़ी रथ या इनसे संबधित गाड़ियां पशुओं द्वारा ही खीचीं जाती थी। इसलिए भारतीय अर्थव्यवस्था में बाजारो का फैलाव राष्ट्रीय स्तर का न होकर स्थानीय स्तर का ही रहा। चूंकि भारत एक ग्रामीण अर्थव्यवस्था वाला देश है अतः स्थानीय स्तर की जरुरतों से संबंधित सामान और उनके माँग की पूर्ति का मुख्य स्त्रोत स्थानिय उत्पादों पर ही निर्भर था। जिसे महात्मा गाँधी आत्मनिर्भर ग्रामीण अर्थव्यवस्था कहते है और यह व्यवस्था इतनी सक्षम थी कि वह स्थानीय माँगों को पूर्ण कर सकती थी। केवल इतना ही नही भारतीय हस्त–शिल्प और लघु उद्योगों के उत्पादों की माँग जिनमें कपडा, मलमल, रेशम, मसालों और रत्न की माँग सम्पूर्ण यूरोप में थी। इनके प्रमख केन्द्र उत्तर पश्चिम और दक्षिण भारत के विभिन्न क्षेत्रों में स्थित थे। जिनके यहाँ से उपर्युक्त वर्णित उत्पादों का निर्यात वर्षो से भारतीय बंदरगाहों द्वारा अन्य जगहों को होता आया था।

इनके लाभ से भारतीय कामगार और अर्थव्यवस्था को अधिकाधिक लाभ प्राप्त हुआ। इसलिए भारतीय अर्थव्यवस्था एक समृद्धशाली अर्थव्यवस्था बन गयी। जो 18वीं शताब्दी के प्रारम्भ तक विश्व अर्थव्यवस्था में लगभग 17 प्रतिशत का योगदान कर रही थी। हालांकि भारत में स्थलीय मार्गो के विकास के लिए विभिन्न शासकों द्वारा अपने–अपने शासनकाल में सुधार कार्य कराए गये परन्तु यह उतने पर्याप्त लाभकारी नही हुए कि भारतीय यातायात संचार व्यवस्था को द्रुत गति प्रदान कर सके। इसके विपरीत भारत में नदी मार्गो की बहुलता के कारण आंतरिक व्यापार के लिए इनका प्रयोग स्थलीय मार्गो की जगह ज्यादा होता रहा था। हालांकि भारत एक मानसून प्रधान देश है और वर्षा ऋतु के समय नदी–घाटियों में जलभराव एवं बाढ़ के कारण आंतरिक क्षेत्र एक दूसरे से अलग–थलक पड़ जाते है। ऐसी परिस्थिति में आंतरिक व्यापार पूर्णतः अवरुद्ध हो जाता था। इन सबके बावजूद भारत में एक कोनें से दूसरे कोनें तक वस्तुओं के आवागमन के लिए नदी मार्ग ही सबसे उपयुक्त मार्ग थे। बहरहाल भारत एक संसाधन सम्पन्न देश था, जहाँ कृषि से उत्पादित अनाजों के साथ–साथ जरुरत से संबंधी अन्य बाजारु माँग के लिए यहाँ के हस्त–शिल्प और ग्रामीण कुटीर उद्योग पर्याप्त थे। जो हाथ की कारीगरी पर ज्यादा और मशीन की कारीगरी पर कम निर्भर थे। फिर भी भारत के विभिन्न भागों कों स्थित हस्त–शिल्प उद्योग इतने सक्षम थें कि यह भारत के साथ–साथ विदेशी माँगो की पूर्ति आसानी से कर पा रहे थे। लिहाजा भारतीय उत्पादन व्यवस्था कों कुशल श्रमिकों के अतिरिक्त कभी भी तेज तर्रार मशीनों की आवश्यकता नही हुई और न ही इनके काम में आने वाले यातायात साधनों में बदलाव की जरुरते महसूस की गई। लेकिन बहुत ही जल्द भारत में यह सत्र बदलने वाला था इसके पूर्व इन बदलावों की शरूआत यूरोप में हुई। मुख्यतरू पुर्नजागरण के पश्चात् यूरोप में जो आर्थिक परिवर्तनों की शुरूआत हुई उसने केवल यूरोप को ही नहीं बल्कि यूरोप से जुड़े विश्व के दूसरे हिस्सों को भी प्रभावित किया। नये समुद्री भागों की खोज ने यूरोपवासियों को केवल एशिया या पूर्व देशों तथा अमेरिको महाद्वीप तक पहुंचने का रास्ता ही नहीं दिखाया बल्कि इनसे यूरोप के साथ–साथ इन महाद्वीपों पर नए आर्थिक घटनाओं को भी प्रारंभ कर दिया। भले ही इसमें शुरूआती तौर पर भाग लेने वाले स्पेन और पुर्तगाल जैसे राष्ट्र थे लेकिन बहुत ही जल्द यूरोपीय राष्ट्रीय व्यवस्थाओं और नवीन राजवंशों के उत्थान के साथ ही फ्रांस, इंग्लैण्ड एवं नीदरलैण्ड जैसे अन्य यूरोपीय राष्ट्र भी शामिल हो गये। इन देशों ने अपनी शेयर होल्डिंग कंपनियों को भारत जैसे पूर्व के देशों में व्यापार करने के लिए न केवल भेजना शुरू किया वरन इन्हे सरकारी संरक्षण भी दिया। जिसका परिणाम यह होता था कि कभी–कभी कंपनियों के मध्य की आपसी प्रतिस्पर्द्धा इन यूरोपीय देशों के मध्य युद्ध प्रारंभ होने का कारण बन जाती और कभी इन यूरोपीय देशों के बीच की आपसी लड़ाई इन कम्पनियों के मध्य की लड़ाई बन जाती। उदाहरण के लिए भारत में वर्चस्व हेतु अंग्रेजी और फ्रांसीसी कम्पनियों के मध्य लड़ा गया कर्नाटक का युद्ध। इन सब के बीच इन निजी कम्पनियों के व्यापार का फायदा उक्त मातृदेशों का होता रहा बदले में यह मातृदेश इन कम्पनियों को संरक्षण देते चले गए। इस प्रकार यूरोप में होने वाले इन आर्थिक परिर्वतनों ने यूरापीय देशों में बड़ें

Approved by UGC
Journal No. 48923
Letter No. : NSL/ISSN/INF/2014/461

ISSN 2348-4624
IIJ Impact Factor No. : 2.695

Śodha Mīmāṁsā

An International Refereed Research Journal

Year-V | No. XVII, Issues-III | January-March, 2018

Editor in Chief

Dr. Rakesh Kumar Maurya

Associate Editor

Dr. Anish Kumar Verma
Dr. Jayant Kumar

Published by :

Kusum Jankalyan Samiti
Deoria, U.P. (INDIA)

वर्ण विन्यास वक्रता और महाकवि कालिदास के काव्यों में उसका निरूपण 139–140
डॉ0 उदय राज मीना
पं0 गणेशराम शर्मा विरचित संस्कृतकथाकुञ्जम् में चित्रित युगीन परिवेश 141–143
डॉ0 समय सिंह मीना
बौद्ध मठ में भिक्षु–भिक्षुणियों की योगदान 144–145
डॉ0 कृष्ण मुरारी
श्रीमद्भगवद्गीता में दिव्य शिक्षा 146–147
डॉ0 मीना कुमारी
उत्तर भारतीय शास्त्रीय संगीत में सितार वादन के प्रचलित घराने 148–150
डॉ0 जिबेन्द्र नारायण गोस्वामी
भारवि के किरातार्जुनीयम् महाकाव्य में वर्णित राजधर्म 151–152
डॉ0 आशा सिंह रावत
मनुस्मृति में वर्णित राजतंत्र की प्रासंगिकता 153–154
डॉ0 प्रतिभा किरण
परमहंस योगानंद के दर्शन में 'प्राण' का स्वरूप 155–157
कुमुदेश कुमार सिंह व डॉ0 सुस्मिता भट्टाचार्य
अलंकार विमर्श : रुद्रट कृत काव्यालंकार के विशेष सन्दर्भ में 158–159
बृजेश प्रसाद दूबे
उपनिषदों में जीवन दर्शन 160–162
सुभाष सिंह
पर्यावरण नीतिदर्शन 163–165
आदित्य कुमार
योगश्चित्तवृत्तिनिरोधः 166–168
डॉ0 कविता शर्मा
प्राचीन भारतीय साहित्यिक स्रोतों में राजस्व के विभिन्न विचार 169–171
डॉ0 सुरेन्द्र कुमार
रामायण कृति की पूर्ण समीक्षा 172–174
डॉ0 उर्मिला मीणा
'गंगोदय' का समीक्षात्मक अध्ययन 175–176
डॉ0 मधु अग्रवाल
'असाध्य वीणा' का कथ्य और शिल्प 177–179
मुकेश पचौरी
विज्ञान एवं अध्यात्म–एक दार्शनिक विवेचन 180–182
डॉ0 शशि शेखर दास
औपनिवेशिक काल में हुए आदिवासी विद्रोहों का ऐतिहासिक पुनरावलोकन 183–185
डॉ0 शशिकेश कुमार गोंड
भारत में समाजवादी आंदोलन की उत्पत्ति एवं विकास 186–188
डॉ0 अखिलेश कुमार राय

◆◆◆

Śodha Mīmāṁsā - ISSN 2348-4624
Letter No. NSL/ISSN/INF/2014/461
Published by : Kusum Jankalyan Samiti, Deoria, U.P. (INDIA)
UGC Journal No. 48923

IIJIImpact Factor : 2.695
Year : V, No. XVII, Issues-III, January-March, 2018
Page No. : 183-185

औपनिवेशिक काल में हुए आदिवासी विद्रोहों का ऐतिहासिक पुनरावलोकन

डॉ० शशिकेश कुमार गोंड*

*सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी

सारांश : भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन का इतिहास एक वृहद् संघर्ष वाला इतिहास रहा है। जिसमें भारत के प्रत्येक वर्ग द्वारा भारत की आजादी के लिए अपना सर्वस्व न्यौछावर कर दिया गया। भारत में मुगल साम्राज्य के विखण्डन के पश्चात् जिस पाश्चात्य साम्राज्यवादी शासन का जन्म हुआ। उसने भारतीय समाज और उसकी अर्थव्यवस्था का अपने व्यापारिक उद्देश्य के लिए शोषण करना आरंभ कर दिया। अंग्रेजी साम्राज्य की इस शोषणकारी व्यवस्था के खिलाफ आरंभिक भारतीयों ने सबसे पहले जिस समुदाय ने प्रतिरोध किया उनमें आदिवासी सबसे पहले थे। यह भारतीय भू–भाग पर सभ्यता के आरंभ से ही रहते आये थे जिनकी अपनी अलग सांस्कृतिक पहचान थी।

मुख्य शब्द : विद्रोह, आदिवासी, सांस्कृतिक भिन्नता, नृजातीय शास्त्रीय, साम्राज्यवाद आदि।

भारतीय समाज में प्राचीन समय से ही अनेक मान्यताओं, धर्मों, नस्लों, भाषा और बोलियों वाले लोग एक साथ रहते आए हैं। जिनमें से कई इस भारतीय भू–भाग पर अनादिकाल से निवास करते रहे है। इनका इतिहास दक्षिण एशियाई भू–खण्ड पर मानवीय प्रजातियों के विकास एवं बसावट से भी जुड़ा हुआ है। जैसा कि नृजातिय शास्त्रीय बताते हैं कि कैसे विश्व के अन्य हिस्सों की तरह ही भारत में भी अफ्रीकी महाद्वीप से होकर मानव यहाँ पहुँचा और बस गया।[1] इनके बसने का इतिहास इस उपमहाद्वीप में हजारों साल पुराना है और इस विकास के क्रम में अन्य मानव प्रजातियाँ जुड़ती चली गयी। ठीक उसी प्रकार से जैसे भारतीय सभ्यतात्मक इतिहास में यहाँ विभिन्न नस्लों के लोग आते गए और मुख्य भारतीय समाज में समाहित होते चले गए। जैसे आर्य, शक, हूण, पार्थियन, कुषाण, यूनानी, तुर्क, मुगल आदि।

इन सभी ने भारत में एक ऐसे समाज का निर्माण किया जो विविधता लिए हुए था। जिनकी अपनी अलग धार्मिक, मान्यताएं, विश्वास, भाषा खान–पान, बोलिया और पहनावे थे। बावजूद इसके यह सभी एक ही भूखण्ड और एक संयुक्त समाज का हिस्सा थे। उपर्युक्त मुख्य समाज के साथ–साथ वह आदिम समाज भी समानान्तर अपने आप को मानवीय सभ्यता के क्रम में बनाए हुए था। जिनका वर्णन प्राचीन भारत से लेकर मध्यकालीन भारत तक आटविक, गिरिजन, आदिम जाति, के साथ–साथ उनके मूल नामों संथाल, भील, गोंड, उरांव, बोडो, असुर, गारो, अहोम, खाँसी आदि नाम से मिलता है। इन सबी का अपना भिन्न निवास क्षेत्र, भाषा, रहन, सहन और सामाजिक व्यवस्था थी।

मुख्यतया वनों के संसाधनों पर निर्भर यह जनजातीय समूह अपनी आत्म निर्भर आर्थिक व्यवस्थाओं एवं सामाजिक मान्यताओं से शासित थे। जिनका बाहरी मुख्य सामाजिक जन जीवन से सरोकार केवल एक दूसरे की आवश्यकताओं तक ही सीमित था। बाहरी समाज या शासन इन आदियासी क्षेत्रों और आदियासीयों के जन–जीवन में उतना ही हस्तक्षेप करता जितना वह करने देते। ऐसे में आदियासी और मुख्य समाज के मध्य जो एक महीन सीमा रेखा थी दोनों तरफ से ही इसका पालन किया जाता था। मुख्यतः प्राचीन और मध्यकालीन भारत में ऐसा ही होता आया था।[2] ऐसे उदाहरण बहुत कम या न के बराबर दिखाई पड़ते हैं, जब कोई शासक या मुख्य समाज का कोई व्यक्ति उनके अपने क्षेत्रों पर आधिपत्य या हस्तक्षेप करने की कोशिश किया हो। आदियासियों की अपनी कृषि व्यवस्था, हस्तशिल्प एवं वन्य उत्पाद थे। जिनका सेवन या लाभ मुख्य समाज के लोग उठाते रहे थे, इसके बदले में आदिवासी मुख्य समाज के उत्पादों का लाभ। लेकिन धीरे–धीरे अट्ठारहवी शताब्दी के पश्चात भारत की केन्द्रीय सत्ता के कमजोर होने और भारतीय भू–भाग की क्षेत्रिय शक्तियों के आपसी टकरावों ने जल्द ही यह परिस्थितियाँ बदल कर रख दी। वैसे तो 15वीं शताब्दी से ही भारत में यूरोपीय कम्पनियाँ व्यापार के उद्देश्य से आने लगी थी। जिनमें पुर्तगाली पहले थे और इनके पीछे डच, फ्रेंच और अंग्रेज आदि भी भारत आ पहुँचे।

इन कम्पनियों द्वारा भारतीय मसालों, कपड़ों और बहुमूल्य रत्नों से यूरोपीय व्यापार में बहुत लाभ कमाया गया। जिसको यह सभी और विस्तार देने की जुगत में लगे रहे। यही दूसरी ओर भारत में आन्तरीक युद्धों और 18 वीं सदी में विघटित होते मुगल साम्राज्य ने इन यूरोपिय व्यापारिक कम्पनियों को भारत में राजनीतिक वर्चस्व स्थापित करने का अवसर भी प्रदान कर दिया।[3] जिसकी ताक में यह साम्राज्य की ताकते वर्षों से इंतजार में बैठी थी। अब बस देरी इस बात की थी कि भारतीय भू–भाग पर राजनीतिक और आर्थिक आधिपत्य कौम स्थापित करेगा। भारत पर आधिपत्य की इस लड़ाई में इंग्लैंड की एक निजी कम्पनी जो ईस्ट इण्डिया कम्पनी थी ने सफलता प्राप्त की। जिसने भारत में सभी यूरोपिय शक्तियों को बाहर करते हुए, 1757 ई० में प्लासी के युद्ध विजय के पश्चात अपनी राजनीतिक सत्ता का श्रीगणेश किया। इसी के साथ आदिवासी और आधुनिक भारतीय इतिहास में एक नए औपनिवेशिक काल का प्रारंभ हुआ। वास्तव में ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कम्पनी विशुद्ध रुप से एक व्यापारिक कम्पनी थी।

जिसने भारत पर अपना राजनीतिक वर्चस्व इसी उद्देश्य से ही स्थापित किया था, कि वह अपने व्यापार के लिए एक ऐसे अनुकूल बाजार का निर्माण कर सके, जहाँ उसको अधिक से अधिक मुनाफा प्राप्त हो।[4] कम्पनी ने भारत में अपने प्रशासन का विकास इसी तर्ज पर किया कि वह भारतीय संसाधनों का लाभ उठा सके। यह संसाधन कृषि, जंगल, भूगर्भिय खनिज और फसलीय उत्पाद थे। जिन्होंने कम्पनी के व्यापार में व्यापक वृद्धि का समावेश किया। यही कारण था कि कम्पनी केवल पलासी के युद्ध तक ही नहीं रुकी वरन उसने बक्सर के युद्ध के पश्चात इसे जारी रखा। जिसके साम्राज्य विस्तार को कंपनी के द्वारा नियुक्त गवर्नर जनरलों और उनके मातहत अधिकारियों ने आगे बढ़ाया। वारेन हेस्टिंग्स से लेकर डलहौजी तक ने कम्पनी के शासन के अधीन भू–भाग को विस्तारित किया। उन्होंने अपनी नीतियों के माध्यम से भरपूर लाभ उठाया तथा भारत के देशी रजवाड़े एक बाद एक कम्पनी के अधीन होते चले गये। यह रजवाड़े कम्पनी की विभिन्न प्रशासनिक और शोषणकारी आर्थिक नीतियों के न चाहते हुए भागीदार बन गये। विशेषतौर पाश्चात्य कानून व्यवस्था का भारतीय संहितीकरण जिसने भारतीय समाज के प्रत्येक तबके को गहराई तक प्रभावित किया। प्रत्येक तबके को गहराई तक प्रभावित किया।

मसलन कम्पनी को यह बात अच्छे से पता थी कि भारत में आय का मुख्य स्त्रोत कृषि से प्राप्त मालगुजारी है। जिसमें ऐसी व्यवस्था करने की आवश्यकता थी कि कम्पनी को प्राप्त होने वाले आय का स्वरूप स्थायी हो जाए। जिसको ध्यान में रखते हुए कम्पनी के नीति निर्माताओं ने जल्द ही कम्पनी शासित क्षेत्रों में इसका रास्ता निकाल लिया। इसके

Approved by UGC , Journal No. 45314
IIJ Impact Factor : 2.013

ISSN 2395-4280
Letter No. : NSL/ISSN/INF/2015-850

Tripathagā

An International Refereed Research Journal

Year-III Number-VI, Part-I, July-December, 2017

Editor in Chief :
Dr. Ranjan Kumar Tripathi
Associate Editor :
Sudhanshu Chaubey

अनुक्रमणिका

- संग्रह त्याग न बिनु पहिचाने : तुलसीदास 1–7
  संध्या सिंह
- रामायणे अपाणिनीयानि क्रियारूपाणि 8–13
  सर्वज्ञभूषण
- वाल्मीकिरामायणे धातूनां परस्मैपदात्मनेपदप्रक्रियाविमर्षः 14–25
  पंकज कुमार शर्मा
- काव्यशास्त्रे गुणविमर्शः 26–28
  डॉ0 राजकुमारः
- वैदिक मन्त्रों में देवता का परिज्ञान 29–31
  मनोज कुमार अग्रहरि
- आर्ष महाकाव्यों में प्रयाग का वर्णन 32–35
  राजेश कुमार
- बौद्धधर्म के विकास में ब्राह्मण विद्वानों का योगदान 36–41
  डॉ0 नीलम यादव
- औपनिवेशिक भारत में रेलवे का प्रारम्भ एवं उनके विकास के कुछ पहलू 42–47
  शशिकेश कुमार गोंड
- भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन में काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के छात्रों की भूमिका 48–53
  हरि प्रताप सिंह
- कठोपनिषदुक्त नीतितत्त्व–एक दृष्टिपात 54–57
  मिताली देव
- संस्कृत साहित्य में नवीन प्रतिमान–"इक्षुगन्धा" 58–61
  डॉ0 (श्रीमती) मधु सत्यदेव
- विंशशताब्द्याः रामकथाधारितेशु प्रमुखसंस्कृतमहाकाव्येषु रामः 62–68
  सुशील कुमार तिवारी
- संस्कृत व्याकरण का उद्भव एवं महर्षि पाणिनी का अवदान 69–73
  मिताली देव
- योगतत्त्व का वैविध्य 74–78
  निलेश मिश्र
- अनुमानांग : एक परिचय 79–82
  शैलेश कुमार द्विवेदी
- खिलाफत आन्दोलन और आजमगढ़ जनपद 83–86
  डॉ0 सुधाकर लाल श्रीवास्तव
- श्रीमद्भगवद्गीता में प्रतिपादित एकेश्वरवाद 87–89
  भूपेन्द्र प्रताप सिंह
- प्राचीन विधिशास्त्र में दण्ड–व्यवस्था 91–93
  अतुल कुमार दुबे

त्रिपथगा
Tripathagā - ISSN 2395-4280
An International Refereed Research Journal

IIJ Impact Factor 2.013
Year-III, No-VI, July-December, 2017
Page No. 42-47

औपनिवेशिक भारत में रेलवे का प्रारम्भ एवं उनके विकास के कुछ पहलू

शशिकेश कुमार गोंड*

रेल मानवीय इतिहास की एक अभूतपूर्व उपलब्धि है, जिसने पूरी मानव सभ्यता पर अपनी गहरी छाप छोड़ी है। केवल इतना ही नहीं इसके आगमन से दुनिया के तमाम देशों की सामाजिक, सांस्कृतिक और आर्थिक परिस्थितियों में परिवर्तन हुआ और देखते ही देखते रेल मानव जीवन की एक मुख्य संघटक इकाई बन गयी है। अतः रेलवे ने यातायात के साधनों में क्रांति ला दिया एवं मानवीय पलायन तथा स्थानान्तरण को द्रुत गति प्रदान किया। जिसका जन्म अगर मोटे तौर पर कहा जाए तो इलैण्ड में प्रारम्भ हुई औद्योगिक क्रांति के गर्भ, मशीनिकरण, औद्योगिकरण और भाप से चालित यंत्रों द्वारा हुआ। जिसने तेज, सुलभ और सस्ते लागत से सम्बद्ध रखने वाले यातायात को जन्म दिया। जिसके पोषण और विकास का मुख्य कारक तत्कालीन अंग्रेजी औपनिवेशिक आर्थिक परिस्थितियाँ बनी, जिससे इस यांत्रिक यातायात को बढ़ावा मिल सका।

अपने आप में बहुत ही दिसचस्प बात यह है कि 1820 और तीस के दशक में इस यातायात प्रणाली का सफल प्रयोग इग्लैण्ड में प्रारम्भ हो चुका था और बहुत ही जल्द इग्लैण्ड ने यातायात की इस द्रुत व्यवस्था को अपने उपनिवेशों में प्रयोग करना शुरू कर दिया। भारत ब्रिटिश उपनिवेशों में सबसे बड़ा था जहाँ 16 अप्रैल, 1853ई0 को पहली बार बाम्बे से ठाणे के बीच रेल सेवा प्रारम्भ की गयी। परन्तु इसमें ध्यान देने वाली बात यह है कि उस दौरान भारत में ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी शासन कर रही थी। जिसकी स्थापना 1600ई0 में महारानी एलिजाबेथ के काल में हुयी थी। ब्रिटिश ईस्ट इण्डिया कम्पनी विशुद्ध रूप से एक नीजि कम्पनी थी। जिसने शीघ्र ही अपने बल पर भारत में एक बहुत बड़ा साम्राज्य कायम कर लिया तथा वह लगभग पूरे दक्षिण पूर्वी एशियाई भू–खण्ड की भाग्य विधाता बन बैठी। इसने जल्द ही भारत में अपना शासन तन्त्र विकसित कर लिया था, जिसका मुख्य कार्य व्यापार का पोषण करना था। अतः भारत इस कम्पनी के लिए केवल और केवल एक बाजार था एवं भारतीय इस प्राइवेट

*असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, बसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी ।

© The Author 2017, Published by South Asia Research & Development Institute, Varanasi
Tripathagā All right reserved for permissions e-mail : tripathaga014@gmail.com

Reg. No. : N-1316/2014-15
Journal No. : 48796
UGC Approved

ISSN 2394-2207
May-October 2017
Vol. III, No. II, Part-II
IIJ Impact Factor : 2.011

उन्मेष

Unmesh

An International Half Yearly
Refereed Research Journal
(Art and Humanities)

सम्पादकद्वय

डॉ० राधेश्याम मौर्य शिवेन्द्र कुमार मौर्य

प्रकाशक

जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़, उ०प्र०

उन्मेष
Unmesh - ISSN 2394-2207
IIJ Impact Factor : 2.011
Vol. III, No. II, Part-II
May, 2017-October, 2017

■ गुप्तकालीन अभिलेखों में लोकल्याणकारी भावनाएँ 65–69
स्नेहलता

■ उच्च–प्राथमिक विद्यार्थियों के लिये योग के आयाम एवं प्रभाव 70–74
सूर्य प्रकाश गोंड

■ बुन्देली संस्कृति में लोक देव हरदौल 75–79
विशाल विक्रम सिंह

■ फणीश्वर नाथ रेणु : मैला आंचल की आंचलिकता 80–84
रत्नाकर यादव

■ वर्तमान परिदृश्य में कबीर 85–87
रवीश कुमार यादव

■ दमोह जिले की सर्वेक्षित शैव प्रतिमाएँ 88–92
उमेश चन्द्र पाण्डेय

■ आधुनिक दलित आन्दोलन और अंग्रेजी राज 93–98
शशिकेश कुमार गोंड

■ नारी की स्थिति : मनुस्मृति के परिप्रेक्ष्य में 99–101
डॉ0 राकेश कुमार मौर्य

■ हिंदी में गद्य और उपन्यास का उदय 102–107
चितरंजन कुमार

■ राष्ट्रीय आन्दोलन में सरदार बल्लभभाई पटेल की भूमिका 108–112
हरि प्रताप सिंह

■ जयशंकर प्रसाद की रंगदृष्टि 113–118
गौरव कुमार जायसवाल

■ बुद्ध एवं गांधी के दर्शन में अहिंसा 119–121
आनन्द शंकर तिवारी

■ दमित बचपन का सच और समकालीन हिन्दी कविता 122–126
ऋचा

■ बलभद्र प्रसाद दीक्षित 'पढ़ीस' की कविताओं में अवधी ग्राम्य जीवन 127–131
दीपिका दूबे

■ भारतीय राजनीति में किसान एवं किसान आत्महत्या 132–135
आनन्द कुमार

■ मीरा के काव्य में अन्तर्निहित विद्रोही चेतना और भक्तिकाव्य 136–139
निर्मला वर्मा

■ स्त्रियों की भाषा और समकालीन उपन्यास 140–144
सुधा पाल

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

IIJ Impact Factor : 2.011
Vol. III, No. II, Part-II
May, 2017-October, 2017
93-98

आधुनिक दलित आन्दोलन और अंग्रेजी राज

शशिकेश कुमार गोंड*

आन्दोलन एक ऐसा शब्द है जिसका आमतौर पर प्रयोग किसी समूह या क्षेत्र विशेष में निवास करने वाले उन मानवों के संदर्भ में किया जाता है, जो अपने राजनीतिक एवं सामाजिक अधिकारों को संगठित रूप से प्राप्त करने के लिए प्रयासरत रहते हैं। जिसके लिए वह लगातार एक जुट होकर कार्य करते है, परन्तु ऐसा तब होता है जब उनमें चेतना का विकास हो और इस चेतना को विकसित करने का कार्य उस समाज, समूह या राष्ट्र के सम्बन्धित बुद्धिजीवी वर्ग द्वारा किया जाता है। यह क्रिया वैसे ही होती है जैसे शान्त पानी में पत्थर मारने पर वह स्पन्दित हो उठता है। इसी तरह दुनिया के इतिहास और अगर हम भारतीय इतिहास में ही देखें तो तमाम आन्दोलन होते रहे हैं, चाहे वह सत्ता प्राप्त करने के लिए हो या सत्ता पर बैठी सरकार हटाने के लिए या फिर किसी समूह द्वारा अधिकारों को प्राप्त करने के लिए समाज में अथवा सरकार के खिलाफ चलाया गया आन्दोलन हो।

इसी प्रकार आधुनिक भारत में हुए दलित आन्दोलन अपने आप में बहुत ही महत्वपूर्ण रहे हैं, यह आन्दोलन भारतीय समाज के अन्दर व्याप्त अस्पृश्यता को लेकर उन वर्गों द्वारा चलाया गया जो वर्षों से इसका सामना करते आए थे। जो सामाजिक ढ़ाँचे में सबसे पिछले पायदान पर खड़े थे। जिनके मौलिक अधिकार उनसे छीन लिए गये एवं वह अबाध्य रूप से अंग्रेजी राज के कायम होने तक इसे झेलते रहे थे। अगर हम इतिहास में देखे तो पाएंगे कि इसके पीछें जो कारण है वह भारतीय समाज में व्याप्त वर्ण व्यवस्था थी जिसमें बाद में व्याप्त बुराइयों से हजारों जातियों का जन्म हुआ। प्रारम्भ में मुख्यतः चार वर्ण थे ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र और यह व्यवस्था अपने शुरूआती समय में बहुत लचीली थी, परन्तु उत्तर वैदिक काल के बाद तथा मुख्यतः गुप्त काल आते–आते कठोर होती चली गयी और भारतीय सामाजिक व्यवस्था में चौथे वर्ण की स्थिति खराब हो गयी, जिन्हें शुरू से ही निम्न कोटि के कार्यों के लिए चुना गया जिसमें खेती के कार्य, गन्दगी साफ–सफाई के कार्य, मरे हुए जानवरों को हटाना, उनकी चमड़ी साफ करना एवं चमड़े के कार्य आदि शामिल थे। अम्बेडकर के शब्दों में कहें तो असल में यह पाचवाँ वर्ण "अछूत" था। उपर्युक्त कारणों की वजह से इन्हें अछूत, चाण्डाल, अत्जंय और अस्पृश्य कहा गया। जिनको द्विज संस्कार से वंचित रखा गया क्योंकि यह अपवित्र थे, इसलिए इनकी बस्तिया गांवों से दूर या बाहर रखी गयी। अगर हम उत्तर वैदिक युग के बाद के कालों में देखे तो पायेंगे कि इन पर प्रतिबन्ध और कड़े होते चले गये। इन्हें विद्या अर्जन, सम्पत्ति अर्जन और वेद पाठ से वंचित करने के साथ–साथ हिन्दू पूजा स्थलों अर्थात मंदिरों में प्रवेश पर भी प्रतिबन्ध लगा दिया गया था। इसके अलावे उच्च तीन वर्णों द्वारा प्रयोग में लाए जाने वाले तालाब, कुओं एवं अन्य सार्वजनिक स्थलों पर इनके प्रवेश तथा प्रयोग पर भी रोक लगा दी गयी। बाद के वर्षों में स्थिति यह हो गयी कि यह अपने पैरों के पीछे झाड़ू एवं गर्दन में हाण्डी बॉधे चलते थे ताकि इनके स्पर्श से कोई उच्च वर्ण का व्यक्ति अपवित्र न हो जाए। इसके साथ ही इनके पहनावे भी निर्धारित किये गये, यह उच्च तीन वर्णों के रहन–सहन की नकल नहीं कर सकते थे, इनके दण्ड विधान भी अलग एवं कठोर होते थे। अतः उचित न्याय न मिल पाने के कारण यह निष्पक्ष न्याय के लिए किसी के पास नहीं जा सकते थे।

इस प्रकार वर्षों से भारतीय समाज का एक बड़ा हिस्सा जिन्हें बाद में "दलित" पुकारा गया इस दंश को झेलते आया था।

---

*असिस्टेंट प्रोफेसर, इतिहास विभाग, बसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी ।

IIJ Impact Factor No. : 3.163
Approved by UGC
Journal No. : 49370

ISSN 0975-8801
Regd. No. 1385/2009-10

ABHIVYAKTI

An International refereed research Journal

Year-X **No. XIX, Part-V** **January-June 2018**

Chief Editor
Urmila Chaturvedi

Executive Editor
Shrinetra Pandey

Editor
Dr. Rakesh Kumar Maurya
Dr. Anish Kumar Verma

Published by :
Kusum Jankalyan Samiti, Deoria, U.P. (INDIA)

- बौद्ध धर्म में 'निर्वाण' का स्वरूप 62–64
  राज किरण
- रामचरितमानस में धर्म–तत्व 65–66
  हरीश प्रताप सिंह
- तुलसीदास के साहित्य में सामाजिक दृष्टिकोण एक विश्लेषण 67–68
  सुशील कुमार यादव
- अद्भुत रामायण में वर्णित नारी शक्ति विमर्श 69–70
  डॉ0 वन्दना पाण्डेय
- व्यावसायिक कृषि के समक्ष प्रमुख चुनौतियाँ : देवरिया जनपद के विशेष सन्दर्भ में 71–74
  बृजमोहन सिंह यादव
- गांधी का कर्मवाद 75–76
  डॉ0 कृष्ण मुरारी
- राष्ट्रीय एकता में संगीत का योगदान 77–78
  डॉ0 जया शर्मा
- संस्कृत काव्यशास्त्र में रसविमर्श 79–80
  बृजेश प्रसाद दूबे
- बाबा नागार्जुन एवं विवेकी राय के आँचलिक उपन्यासों का वैशिष्ट 81–82
  प्रो0 रामध्यान शर्मा व शशिकला यादव
- वैदिक युगीन समाज में संगीत परम्परा की स्थिति 83–86
  डॉ0 अविराज कृष्णराव तायडे
- जयप्रकाश नारायण और सम्पूर्ण क्रांति : एक अवलोकन 87–90
  डॉ0 किसलय सिन्हा
- लैंगिक समानता और नारीवाद का र्दशन 91–93
  आदित्य कुमार
- छायावाद का नारी–विमर्श 94–97
  राम उदय कुमार
- डिजिटल इंडिया में शिक्षा, कृषि एवं ग्रामीण और शहरी जीवन 98–99
  डॉ0 अमरेश कुमार त्रिपाठी
- जैन दर्शन और शिक्षा का स्वरूप 100–101
  संतोष सिंह
- वर्तमान समय में संस्कारों की आवश्यकता एवं अपरिहार्यता 102–103
  डॉ0 अजय कुमार पाण्डेय
- महात्मा गाँधी के मूल्य शिक्षा संबंधी विचारों का अवलोकन 104–106
  डॉ० शशिकेश कुमार गोंड

ABHIVYAKTI - ISSN 0975-8801
An International Refereed Research Journal
Published by : Kusum Jankalyan Samiti
Deoria, U.P. (INDIA)

IIJ Impact Factor No. : 3.163
Year-X, No. XIX, Part-V, January-June, 2018
Page No. : 104-106

महात्मा गाँधी के मूल्य शिक्षा संबंधी विचारों का अवलोकन

डॉ० शशिकेश कुमार गोंड*

सारांश : मूल्य शिक्षा वह शिक्षा है जिसमें हमारे नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक साथ ही आध्यात्मिक मूल्य समाहित होते है। मूल्यपरक विषय के माध्यम से छात्रों के व्यक्तित्व में मूल्य को अन्तर्निविष्ट करने पर बल दिया जाता है जिससे विद्यार्थियों के साथ–साथ एक सन्तुलित तथा सर्वोन्मुखी समाज का विकास हो सके। महात्मा गाँधी के शिक्षा सम्बन्धी विचार सिर्फ किताबी ज्ञान देना ही पूर्ण नहीं मानते बल्कि जो शिक्षा चरित्र–निर्माण न कर सके विद्यार्थियों का सर्वांगीण प्रस्तावित बेसिक शिक्षा में उन्होने मूल्यपरक शिक्षा देने पर जोर दिया इसी बात को वे अपनी पुस्तक 'हिन्द स्वराज' में भी जोर देकर कहते है कि अक्षरज्ञान की शिक्षा देने से न तो विद्यार्थियों का और ना ही समाज का कुछ भला हो सकता है। इसके साथ उन्होने भारत की बर्बादी के लिए डॉक्टरों, वकीलों, मशीन तथा रेलवे को जिम्मेदार ठहराते है क्योंकि इनका औचित्य तभी सिद्ध होगा जब इनके साथ मूल्य भी समाहित हो।

मुख्य शब्द : मूल्य, शिक्षा, समावेश, बुनियादी पाठ्यक्रम, नैतिकता, विद्यार्थी, अन्तर्निविष्ट आदि।

मूल्य शब्द का अर्थ बहुत ही व्यापक संदर्भ में लिया जाता है, परन्तु अगर साधारण शब्दों में कहा जाए तो यह रेखा है जो मनुष्य के सामाजिक व्यवहार में सही और गलत के मध्य अन्तर स्पष्ट करती है। यह किसी भी वस्तु या कार्य का वह गुण होता है, जो उसके अच्छे पक्ष को दर्शाता है। जैसे ईमानदारी, संतोष, शांति, सादगी और विनम्रता मानवीय मूल्यों को प्रदर्शित करते है। कैम्ब्रिज डिक्सेनरी ऑफ फिलॉसोफी मूल्य को परिभाषित करते हुए बताती है कि मूल्य कोई भी वह योग्यता या गुण है जिसे हम सही समझते है।

इसे विभिन्न विद्वानों ने अपने विचारो के माध्यम से व्याखित किया है। ऑलपोर्ट के अनुसार,"मूल्य एक ऐसा विश्वास या आस्था है। जिसका अनुशरण कर व्यक्ति काम करने को श्रेष्ठ या बेहतर समझता है। वही क्रिस्टोफर आरमैल लिखते है, कि मूल्य किसी व्यक्ति के संकलित व्यवहार को प्रेरित करने वाला एक घटक है, यह इस बात पर भी निर्भर करता है कि व्यक्ति किसी कार्य को किस हेतु करता है।

इस प्रकार मूल्य एक ऐसा मानक या गुण है जिसे व्यक्ति सार्थक या वांछनीय समझता है। वही मूल्य शिक्षा का मुख्य उद्देश्य किसी व्यक्ति को उपयुक्त और अनुपयुक्त विचार, सही और गलत के विषय में संबंधित व्यवहारों में अन्तर स्पष्ट करना सिखाती है। इसलिए आज के वर्तमान समय में विद्यार्थियो के लिए नियमित विषयी पाठ्यक्रम के साथ–साथ उनके जीवन में मूल्य शिक्षा का होना अति आवश्यक है। जैसा कि एक प्रसिद्ध उक्ति कहती है कि आज का विद्यार्थी कल का एक जिम्मेदार नागरिक होगा। जिसके लिए विषयी ज्ञान के साथ–साथ मूल्य परख व्यवहार और उससे संबंधिक गुणों का होना किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास कों दर्शाता है। मूल्य भी दो प्रकार के होते है, एक लौकिक तथा दूसरा शाश्वत। लौकिक या सांसारिक मूल्य संदर्भ सापेक्ष है जो व्यक्तिगत एवं सामाजिक विकास के एक अनिवार्य घटक है, वही शाश्वत या अपरिवर्तनीय मूल्य स्थाई भाव जैसे सत्य, सौन्दर्य एवं अच्छाई से जुड़े है जिसका संबंध व्यक्ति के नैतिक और अध्यात्मिक विकास से है। इस प्रकार किसी भी व्यक्ति के व्यक्तित्व विकास कों अनिवार्य मूल्यों में भौतिक, शारीरिक, नैतिक, सांस्कृतिक, अध्यात्मिक और वैज्ञानिक आदि मूल्यों का समावेश अनिवार्य होता है।

एक व्यक्ति के अन्दर इन सभी गुणों का समावेश ही उसे महानता की ओर ले जाता है। जबकि ऐसा नही है कि मूल्य और उससे जुड़ी हुई शिक्षा किसी विद्यार्थी को किसी निश्चित पाठ्यक्रम के तर्ज पर व्याख्यायित कर दी जाय, बल्कि यह एक ऐसी शिक्षा है जिसे एक विद्यार्थी अपने परिवार, माता–पिता, अपने पास–पड़ोस, समाज और विद्यालय तथा महाविद्यालय द्वारा अर्जित करता है। इसलिए मूल्य शिक्षा को देने का उत्तरदायित्त्व जितना एक विद्यार्थी को स्कूल या शैक्षिक संस्थानों को है उतना ही उसके परिवार का भी है। मूल्य–शिक्षा के द्वारा ही एक विद्यार्थी अपने अन्दर के साकारात्मक गुणों को बाहर लाता है। वह साधारण शिक्षा से तो पढ़ना–लिखना सीख जाऐगा लेकिन समाज में एक प्रबुद्ध और ईमानदार नागरिक अपने को वह तभी बना पाऐगा, जब उसके अन्दर मानवीय मूल्यों का समावेश हो।

इसलिए स्वतंत्रा के पश्चात् गठित राधाकृष्णनन और कोठारी शिक्षा आयोग द्वारा किताबी और डिग्री शिक्षा के साथ ही विद्यार्थियों कों नैतिक शिक्षा देने पर बल दिया गया। कोठारी आयोग ने इस बात पर विशेष जोर दिया कि विद्यार्थियों को जितनी औपचारिक शिक्षा की आवश्यकता है, उतनी ही उनके व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए नैतिक और मूल्य शिक्षा की भी जरूरत है। ताकि यह अपने देश और समाज के प्रति अपनी जिम्मेदारीयों को समझे एवं एक जागरूक नागरिक बन सकें। एक मनुष्य के व्यवहार का संबंध मूल्य नैतिकता और चरित्र इन तीनों से होता है।

मूल्य का संबंध अपने मूल रूप में नैतिक नियमों से ही होता है। एक ओर जहाँ नैतिकता का पालन हम बाह्य दबाव के कारण करते है वहीं मूल्यों का पालन हम आन्तरिक दबाव के कारण करते है। बावजूद इसके एक समाजिक प्राणी होने के नाते मनुष्य के अन्दर मानवीय गुणों के साथ मूल्यों का होना जरूरी है। 1986 ई. की नयी शिक्षा नीति में भी व्यापक स्तर पर मूल्य शिक्षा को विद्यार्थियों तक पहुँचाने को बात कही गयी। नीति में यह स्पष्ट किया गया कि विद्यार्थियों को विद्यालय मूल्य शिक्षा देने में सक्षम नही हो पा रहे

*सहायक आचार्या, इतिहास विभाग, वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी

Reg. No. : N-1316/2014-15
UGC Approved
Journal No. : 48796

ISSN : 2394-2207
IIJ Impact Factor : 2.011

उन्मेष
Unmesh

An International Half Yearly Refereed Research Journal (Art & Humanities)

Vol. : IV No. I, Part-IV November, 2017-April, 2018

सम्पादकद्वय
डॉ० राधेश्याम मौर्य
शिवेन्द्र कुमार मौर्य

सह-सम्पादक
डॉ० मनोहर लाल

प्रकाशक
जन सेवा एवं शोध शिक्षा संस्थान, प्रतापगढ़-२३०००१ (उ०प्र०)

- प्रतापगढ़ जनपद में समन्वित ग्रामीण विकास हेतु कृषि नियोजन की प्रभावी रूपरेखा 155–160
  दीपक कुमार मिश्र व डॉ0 अर्जुन प्रसाद पाण्डेय
- भारत के कृषि क्षेत्र में विद्यमान समस्याओं का आलोचनात्मक मूल्यांकन 161–165
  डॉ0 पूनम मिश्रा
- यौनकर्मी महिलाओं की व्यथा कथा और हिंदी उपन्यास 166–168
  रूपाली सिन्हा
- विभाजन और सांप्रदायिकता का नृशंस नजारा 169–171
  डॉ0 शैलजा. के
- रविन्द्रनाथ टैगोर का शिक्षा के क्षेत्र में चिंतन : एक अध्ययन 172–174
  डॉ0 अनिल कुमार
- नेतृत्व के सिद्धान्त : एक अध्ययन 175–177
  डॉ0 माधुरी दुबे
- प्रबन्ध की भारतीय एवं जापानी शैली के अन्तर्गत कार्मिक कार्यसंतुष्टि का तुलनात्मक अध्ययन 178–180
  डॉ0 विनोद कुमार तिवारी व साकेत दीक्षित
- महामना पं0 मदन मोहन मालवीय 181–183
  डॉ0 मधूलिका श्रीवास्तव
- देवकली विकासखण्ड, जनपद–गाजीपुर में अनुसूचित जातियों का वितरण 184–188
  चारू त्रिपाठी
- ग्रामीण सामाजिक संरचना के बदलते आयाम : चौपालों के विशेष संदर्भ में 189–192
  डॉ0 चरण सिंह मीना
- कौटिल्य द्वारा वर्णित आर्थिक संस्थाएँ 193–195
  डॉ0 उदय राज मीना
- पुराणों में तंत्री वाद्य का महत्व 196–199
  डॉ0 जितेन्द्र प्रताप सिंह
- आधुनिक भारत में स्त्री शिक्षा के प्रयास और सम्बन्धित मुद्दे 200–203
  डॉ0 शशिकेश कुमार गौंड
- खाद्य सुरक्षा : एक ज्वलन्त समस्या 204–205
  डॉ० जयश्री भारद्वाज व डॉ० शरद चन्द्र
- भारतीय समाज में जाति व्यवस्था : कल और आज 206–209
  डॉ0 चन्द्रभान सिंह यादव
- भारतीय महिलाओं की स्थिति : असमानता के सन्दर्भ में 210–212
  नम्रता सिंह

■■■

उन्मेष Unmesh - ISSN 2394-2207

IIJ Impact Factor : 2.011
Vol. IV, No. I, Part-IV
November, 2017-April, 2018
Pg. No. 200-203

आधुनिक भारत में स्त्री शिक्षा के प्रयास और सम्बन्धित मुद्दे

डॉ0 शशिकेश कुमार गोंड*

भारतीय समाज भी उन सामाजिक व्यवस्थाओं में शामिल रहा है। जहाँ महिलाएँ सामाजिक हँसिये पर रही है। वैसे तो विश्व के अनेकों भागों में महिलाओं से सम्बन्धित अनेक कुरीतियाँ विद्यमान थी। जो सामाजिक लोकाचार का हिस्सा रही, इन सामाजिक कुरीतियों ने महिलाओं को पुरुषों की तरह समाज में बराबरी से वंचित रखा। भले ही महिला आबादी के बगैर किसी भी आधुनिक और पुरातन समाज की कल्पना करना असंभव हो लेकिन वास्तविकता यही थी, कि दुनियाभर के समाज में इस सृजन करता महिला वर्ग की स्थिति दिन पर दिन पुरुषों की तुलना में कमजोर और दयनीय होती चली गई। मानव इतिहास में स्थापित विभिन्न सभ्यताओं की सामाजिक व्यवस्थाओं में ऐसे बहुत ही कम सभ्यताएँ या देश दिखाई पड़ते हैं। जहाँ महिलाओं और पुरुषों को बराबरी का अधिकार प्राप्त हो। जैसा कि नारीवादी विचारको का मानना है,कि समय के साथ–साथ सामाजिक व्यवस्थाओं पर पुरुषों का वर्चस्व धीरे–धीरे स्थापित होता चला गया और इस प्रकार समाज एक पुरुष प्रधान समाज के रूप में परिवर्तित हो गया। जब ऐसा हुआ तो सामाजिक नियमों को पुरुषों ने अपने हिसाब से बनाना शुरू कर दिया और महिलाओं को धीरे–धीरे चारदीवारी में बन्द कर दिया गया।

फ्रेडरिक एंगेल्स और कार्ल मार्क्स ने अपनी पुस्तक परिवार निजी सम्पत्ति और राज्य की उत्पत्ति में यह बताने की कोशिश की है, कि कैसे आरम्भिक दौर में परिवार और सम्पत्ति पर महिलाओं का बराबर का अधिकार था और समाज में एकमात्र सत्ता व्यवस्था स्थापित थी। परन्तु धीरे–धीरे सम्पत्ति, परिवार और महिला जीवन पर भी पुरुषों का अधिकार स्थापित होता चला गया। यह वर्चस्व इतना कठोर था कि सम्पूर्ण समाज ने ही एक पितृसत्तात्मक समाज का रूप धारण कर लिया। जिसमें सभी पारिवारिक आर्थिक सामाजिक और राज्य नियम पुरुष व्यवस्था के अनुकूल और स्त्री अधिकारों के प्रतिकूल कर दिए गए। महिला और पुरुषों के मध्य बढ़ता विभेद इतना बढ़ गया कि महिलाएँ पुरुष प्रधान समाज में अपनी मौलिक अधिकारों से वंचित हो गई। इस प्रकार के विभेद जो किसी भी समाज में प्रचलित थे उनको न्यायोचित ठहराने के लिए धार्मिक आडम्बर का सहारा लिया गया।

औपनिवेशिक भारतीय समाज में प्रचलित सती प्रथा जैसी कुप्रथा इसका एक उदाहरण है। जिसका व्यवहार धर्म के आधार पर किया जाता रहा जब तक कि राजा राममोहन राय के प्रयासों से 1829 ईस्वी में इस पर पूर्ण प्रतिबन्ध नहीं लगा दिया गया। ऐसी प्रथा केवल भारत में ही नहीं थी वरन महिलाओं को लेकर इस प्रकार की धार्मिक सामाजिक दुर्व्यवहार विश्व के अनेकों जगहों पर 19वीं और 20वीं शताब्दी तक प्रचलित रही। औपनिवेशिक भारत में देवदासी प्रथा और निम्न जातीय महिलाओं के साथ होने वाले विभेद ने उन्हें दोहरे तरीके से प्रभावित किया। एक महिला होने के नाते और दूसरे समाज के अछूत वर्ग से आने के कारण उन्हें अन्य तरह की पीड़ा उठानी पड़ी। यूरोप, अफ्रीका, अमेरिका महाद्वीपों में भी इसी प्रकार की रूढ़िवादी और महिला विरोधी कार्य व्यवहार प्रचलित रहे। मसलन अगर देखा जाए तो इस समय तक महिलाओं को सार्वजनिक जीवन में ज्यादा स्वतंत्रता प्राप्त नहीं थी। उन्हें आर्थिक राजनीतिक और शैक्षिक अधिकारों से वंचित रखा गया उन्हें केवल घरेलू कार्यों योग्य समझा गया यहाँ। तक कि उनके

*सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, वसन्त कन्या महाविद्यालय, कमच्छा, वाराणसी